[2019] 5 एस.सी.आर. 1141

पवन कुमार

बनाम

बाबूलाल की मृत्यु हो गई

एलआरएस. और ओ.आर.एस.

(सिविल अपील संख्या 3367 2019)

अप्रैल 02, 2019

[उदय उमेश ललित और इंदु मल्होत्रा, जे.जे.]

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908:

या VII आर 11 - के तहत आवेदन - स्वामित्व की घोषणा के लिए एक मुकदमे में - इस आधार पर वाद को अस्वीकार करने की मांग कि मुकदमा धारा के तहत वर्जित था। बेनामी लेनदेन (निषेध) अधिनियम के 4 - ट्रायल कोर्ट ने आवेदन की अनुमति देते हुए वाद को खारिज कर दिया - उच्च न्यायालय ने ट्रायल कोर्ट के आदेश को बरकरार रखा - अपील पर, दलील दी गई कि मामला एस के तहत कवर किया गया था। बेनामी लेनदेन अधिनियम की धारा 4(3) - आयोजित: सवाल यह है कि क्या वादी को धारा के तहत प्रतिबंधित किया गया था। अधिनियम के 4 या नहीं, यू/ओआर के तहत आवेदन के चरण में मूल्यांकन का विषय नहीं हो सकता था। VII r.11 को लिया गया - पक्षों द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने के बाद मामले पर पूर्ण और अंतिम विचार की आवश्यकता थी - आवेदन यू/ओआर। VII r 11 खारिज किया जाता है।

कोर्ट ने अपील स्वीकार करते हुए

माना गया: वर्तमान मामले में, आदेश VII नियम 11 सीपीसी के तहत एक आवेदन में विवाद उत्पन्न हुआ है। क्या मामला बेनामी लेनदेन अधिनियम की धारा 4(3) के दायरे में आता है या नहीं, यह एक ऐसा पहलू है जिस पर रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर गौर किया जाना चाहिए। वादपत्र में दिए गए कथनों के अनुसार, यह प्रश्न किया गया कि अपीलकर्ता द्वारा उठाई गई याचिका अधिनियम की धारा 4 के तहत वर्जित है या नहीं, उस

स्तर पर मूल्यांकन का विषय नहीं हो सकता था जब आदेश VII नियम 11 सीपीसी के तहत आवेदन लिया गया था। कीमत के एवज में। पक्षों द्वारा साक्ष्य दिए जाने के बाद मामले पर पूर्ण और अंतिम विचार की आवश्यकता थी। यह नहीं कहा जा सकता कि अपीलकर्ता की दलील, जैसा कि प्रथम दृष्टया उठाया गया था, अधिनियम के तहत वर्जित थी। दृष्टिकोण यह होना चाहिए कि डिमुरर पर आगे बढ़ें और देखें कि क्या वादपत्र में दिए गए कथनों को स्वीकार करने पर मुकदमा किसी कानून द्वारा वर्जित है या नहीं। [पैरा 13]

पोपट और कोटेचा प्रॉपर्टी बनाम स्टेट बैंक ऑफ इंडिया स्टाफ एसोसिएशन **(2005) 7 एससीसी 510: [2005] 2 सप्ल। एससीआर 1030 - पर निर्भर।**

ओम प्रकाश और अन्य बनाम जय प्रकाश **(1992) 1 एससीसी 710: [1992] 1 एससीआर 15 - प्रतिष्ठित।**

मार्सेल मार्टिंस बनाम एम. प्रिंटर और अन्य **(2012) 5 एससीसी 342: [2012] 5 एससीआर 480;** *एलआर.वी. के माध्यम से आर. राजगोपाल रेड्डी। एलआर के माध्यम से पद्मिनी चन्द्रशेखरैया।* **(1995) 2 एससीसी 630 : [1995] 1 एससीआर 715 - संदर्भित।**

केस कानून संदर्भ

[2012] 5 एससीआर 480	**को पैरा 8**	**में संदर्भित किया गया है**
[1992] 1 एससीआर 15	**ने पैरा 8**	**को प्रतिष्ठित किया**
[1995] 1 एससीआर 715	**पैरा 12**	**को संदर्भित करता है**
[2005] 2 पूरक। एससीआर 1030	**पैरा 13**	**पर निर्भर था**

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2019 की सिविल अपील संख्या 3367

एसबीआरएफए संख्या 511/2016 में राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ, जयपुर के निर्णय और आदेश दिनांक 18.08.2017 से।

आर.के. सिंह, सुश्री नीरज सिंह, कुमार गौरव, सुश्री रितु रेनिवाल, पी. दयाल, राहुल डॉ. त्रिपाठी, रामेश्वर प्रसाद गोयल, सलाहकार। अपीलकर्ताओं के लिए.

सरद क्र. सिंघानिया, मिलिंद कुमार, सुश्री रोहिणी मूसा, उत्तरदाताओं के लिए सलाहकार।

न्यायालय का निर्णय सुनाया गया

उदय उमेश ललित, जे. द्वारा

1. अनुमति दी गई.

2. यह अपील 2016 के एसबीआरएफए संख्या 511 में जयपुर में राजस्थान के उच्च न्यायालय द्वारा पारित अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 18.08.2017 पर सवाल उठाती है।

3. अपीलकर्ता ने कसबा फ़तेहपुर के मुख्य बाजार में परिसर के संबंध में स्वामित्व की घोषणा के लिए एक मुकदमा दायर किया, जिसका विशेष रूप से वादी में वर्णन किया गया था और प्रार्थना की कि उसे परिसर का मालिक घोषित किया जाए और बिक्री विलेख दिनांक 24.07.2006 को निष्पादित किया जाए। पहले प्रतिवादी के पक्ष में दूसरे प्रतिवादी के आदेश को रद्द किया जाए। वादी में सामग्री कथन इस प्रकार थे:

(ए) उक्त परिसर में एक दुकान पहले प्रतिवादी, अर्थात् अपीलकर्ता के पिता, द्वारा पूर्व मालिक से किराए पर ली गई थी;

(बी) पहला प्रतिवादी बूढ़ा हो गया था, यह अपीलकर्ता ही था जो पूरे व्यवसाय की देखभाल कर रहा था;

(सी) पूर्ववर्ती मालिक ने कब्जे के लिए मुकदमा दायर किया था जो मामला सीधे इस न्यायालय तक आया था;

(डी) पूर्व मालिक और पहले प्रतिवादी के बीच एक समझौता हुआ था जिसके तहत जिस परिसर में दुकान स्थित है, उसे पहले प्रतिवादी के पक्ष में बेचने पर सहमति हुई थी;

(ई) पहले प्रतिवादी के पास पर्याप्त धन नहीं था और इस प्रकार अपीलकर्ता ने ही साहूकारों से ब्याज पर उधार लेकर सारे धन की व्यवस्था स्वयं की थी;

(एफ) बिक्री विलेख तैयार करते समय, पहले प्रतिवादी ने संकेत दिया था कि परिसर उसके नाम पर लिया जाएगा;

(छ) पहले प्रतिवादी के नाम पर परिसर खरीदने के बाद भी, अपीलकर्ता उक्त दुकान में व्यवसाय कर रहा था;

(ज) पहले प्रतिवादी ने गवाहों की उपस्थिति में 14.03.2002 को स्टांप पेपर पर एक दस्तावेज निष्पादित किया था, जिसे नोटरी पब्लिक द्वारा सत्यापित किया गया था, जिसमें स्वीकार किया गया था कि अपीलकर्ता ने परिसर की खरीद के लिए पूरा भुगतान कर दिया था।

(i) दूसरा प्रतिवादी भी परिसर में किरायेदार था और उपरोक्त खरीद के बाद वह अपीलकर्ता को किराए का भुगतान कर रहा था।

(जे) पहले प्रतिवादी की वृद्धावस्था और नाजुक स्वास्थ्य का अनुचित लाभ उठाते हुए, दूसरे प्रतिवादी ने 19.07.2002 को पहले प्रतिवादी से विवादित दुकान की पहली मंजिल के संबंध में अपने पक्ष में एक दस्तावेज लिखवाया।

उपरोक्त मामले के साथ, अपीलकर्ता द्वारा जिला न्यायाधीश, सीकर की अदालत में सिविल सूट नंबर 126, 2006 दायर किया गया था।

4. दूसरे प्रतिवादी ने अपीलकर्ता द्वारा दायर मामले को खारिज करते हुए अपना लिखित बयान दाखिल किया। नौ साल बाद, दूसरे प्रतिवादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता (संक्षिप्त 'सीपीसी' के लिए) के आदेश VII नियम 11 के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया और इस आधार पर वाद को खारिज करने की प्रार्थना की कि मुकदमा बेनामी लेनदेन की धारा 4 के तहत वर्जित था (निषेध) अधिनियम, 1988 (इसके बाद इसे 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित किया जाएगा)।

5. ट्रायल कोर्ट ने आदेश VII नियम 11, सीपीसी के तहत उक्त आवेदन की अनुमति दी और अपने आदेश दिनांक 23.09.2016 द्वारा वाद को खारिज कर दिया। ट्रायल कोर्ट के फैसले के सही अनुवाद का प्रासंगिक भाग इस प्रकार था:

"11. इस प्रकार वर्तमान मामले में वादी ने अपने वाद पत्र में स्वयं कहा है कि वह अपने पिता के नाम पर विवादित संपत्ति अपनी आय से अथवा ब्याज पर लिये गये धन से खरीदना चाहता है। मेरी विनम्र राय में बेनामी लेनदेन (निषेध) अधिनियम, 1988 की धारा-4 के तहत वर्तमान मुकदमा दायर करना निषिद्ध है। इसलिए, आवेदक/प्रतिवादी की ओर से प्रस्तुत माननीय न्यायालय के निर्णय वर्तमान

मामले पर लागू होते हैं। वादी का वाद आदेश-7 नियम-11(3) सी.पी.सी. के अंतर्गत निषिद्ध है।"

6. अपीलकर्ता ने व्यथित होकर उच्च न्यायालय में 2016 का एसबीआरएफए नंबर 511 दायर किया, जिसे उच्च न्यायालय ने अपने फैसले और आदेश दिनांक 18.08.2017 द्वारा खारिज कर दिया। उच्च न्यायालय द्वारा इसे निम्नानुसार देखा गया:

"वादी में दिए गए कथनों से यह स्पष्ट है कि वादी मुकदमे की संपत्ति के संबंध में अपने नाम पर घोषणा की मांग कर रहा है, जिसमें स्पष्ट शर्त है कि उसने उक्त संपत्ति अपने पिता के नाम पर अपने स्वयं के धन/स्रोतों से खरीदी है और उसके पिता थे मुकदमे की संपत्ति का वास्तविक मालिक नहीं, 1988 का अधिनियम यह प्रावधान करता है कि जिस व्यक्ति के नाम पर संपत्ति है, उसके खिलाफ बेनामी रखी गई किसी भी संपत्ति के संबंध में किसी भी अधिकार को लागू करने के लिए कोई मुकदमा, दावा या कार्रवाई किसी की ओर से या उसके द्वारा नहीं की जाएगी। ऐसी संपत्ति का असली मालिक होने का दावा करने वाला व्यक्ति। यह वादी का मामला नहीं है कि विचाराधीन संपत्ति संयुक्त लाभ/संयुक्त स्वामित्व के लिए प्रतिवादी नंबर 1 - पिता के पास थी। मुकदमा स्पष्ट रूप से 1988 के अधिनियम की धारा 4 से प्रभावित था और विद्वान ट्रायल कोर्ट ने आदेश 7 नियम 11 सीपीसी के तहत आवेदन को उचित रूप से अनुमति दी।

7. उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय वर्तमान में अपील के अधीन है। अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अभिषेक गुप्ता ने हमारा ध्यान प्रथम प्रतिवादी और अपीलकर्ता के पिता द्वारा दिनांक 14.03.2002 को निष्पादित लेखन सहित रिकॉर्ड पर मौजूद दस्तावेजों की ओर आकर्षित किया। उक्त दस्तावेज़ दिनांक 14.3.2002 का प्रासंगिक भाग इस प्रकार था:

"मैं बाबू लाल पुत्र स्वर्गीय श्री तारा चंद महर्षि, जाति-ब्राह्मण, निकट लक्ष्मीनाथ प्रेस, फ़तेहपुर, जिला-सीकर (राज.) का निवासी हूँ।

मेरे नाम से कस्बा फ़तेहपुर में सरस्वती पुस्तकालय के पास दुकान सहित उसकी छत पर कमरे बने हुए हैं। चूंकि यह संपत्ति (दुकान) मेरे बड़े बेटे पवन कुमार ने अपनी कमाई से खरीदी थी, लेकिन मुझे सम्मान देने के लिए उसने इस दुकान की

रजिस्ट्री मेरे नाम करा दी थी. अत: इस संपूर्ण संपत्ति पर केवल उसका अधिकार है। भविष्य में न तो मेरा और न ही मेरे किसी अन्य उत्तराधिकारी का इस संपत्ति पर कोई अधिकार होगा।

मैंने अपनी यह स्क्रिप्ट पूरे होश-हवास में, स्वस्थ मन से, बिना किसी दबाव या प्रभाव के अपने बड़े बेटे पवन कुमार के दो गवाहों की उपस्थिति में लिखी है, ताकि भविष्य में उनके आपसी बंटवारे के दौरान यह सबूत के रूप में बनी रहे। भाइयों के बीच इस दुकान के संबंध में किसी भी प्रकार का विवाद उत्पन्न नहीं होगा।"

8. विद्वान अधिवक्ता श्री अभिषेक गुप्ता ने **मार्सेल मार्टिस बनाम एम. प्रिंटर और अन्य1** मैंने इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया और प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ता का मामला पूरी तरह से अधिनियम की धारा 4 (3) के अंतर्गत आता है और यह कि आदेश VII नियम 11, सीपीसी के तहत वाद को खारिज करना निचली अदालतों के लिए उचित नहीं था। श्री आर.के. दूसरी ओर, प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सिंह ने इस दलील का विरोध किया और ***ओम प्रकाश और अन्य बनाम जय प्रकाश2*** में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया।

9. इससे पहले कि हम प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियों पर विचार करें, हमें अधिनियम की धारा 4 पर ध्यान देना चाहिए, जैसा कि 2016 के अधिनियम 43 द्वारा संशोधित होने से पहले था, इस प्रकार था:

"4. बेनामी रखी गई संपत्ति को पुनर्प्राप्त करने के अधिकार का निषेध.–

(1)बेनामी रखी गई किसी भी संपत्ति के संबंध में किसी भी अधिकार को लागू करने के लिए उस व्यक्ति के खिलाफ, जिसके नाम पर संपत्ति है या किसी अन्य व्यक्ति के खिलाफ कोई मुकदमा, दावा या कार्रवाई वास्तविक मालिक होने का दावा करने वाले व्यक्ति द्वारा या उसकी ओर से नहीं की जाएगी। ऐसी संपत्ति का.

(2) बेनामी रखी गई किसी भी संपत्ति के संबंध में किसी भी अधिकार पर आधारित कोई भी बचाव, चाहे वह उस व्यक्ति के खिलाफ हो जिसके नाम पर संपत्ति है या किसी अन्य व्यक्ति के

खिलाफ, किसी भी मुकदमे, दावे या कार्रवाई में या उसकी ओर से अनुमति नहीं दी जाएगी। ऐसी संपत्ति का असली मालिक होने का दावा करने वाला व्यक्ति।

(3) इस धारा में कुछ भी लागू नहीं होगा, -

(ए) जहां जिस व्यक्ति के नाम पर संपत्ति है, वह हिंदू अविभाजित परिवार में सहदायिक है और संपत्ति परिवार में सहदायिकों के लाभ के लिए रखी गई है; या

(बी) जहां जिस व्यक्ति के नाम पर संपत्ति है वह ट्रस्टी है या प्रत्ययी क्षमता वाला कोई अन्य व्यक्ति है, और संपत्ति किसी अन्य व्यक्ति के लाभ के लिए रखी गई है जिसके लिए वह ट्रस्टी है या जिसके प्रति वह ऐसी क्षमता में खड़ा है ।"

10. ***मार्सेल मार्टिंस1*** में वर्ष 1990 में एक मुकदमा दायर किया गया था जिसमें यह घोषणा करने की प्रार्थना की गई थी कि वादी अपने योगदान की सीमा तक कुछ संपत्तियों के सह-मालिक थे। पूरी सुनवाई के बाद, मुकदमे को ट्रायल कोर्ट ने खारिज कर दिया लेकिन उच्च न्यायालय ने फैसले को पलट दिया। इस प्रश्न पर विचार करते समय कि क्या वादी का मामला अधिनियम की धारा 4 की उप-धारा (3) के दायरे में आएगा, इस मामले को इस न्यायालय द्वारा निम्नानुसार निपटाया गया था: -

"28. फिर महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या धारा 4 की उपधारा (3) उस लेनदेन को बचाती है जिससे हम चिंतित हैं।

29. ऊपर निकाली गई धारा 4 की उपधारा (3) दो अलग-अलग भागों में है। पहले भाग में खंड (ए) से धारा 4(3) शामिल है जो परिवार में ऐसे सहदायिकों के लाभ के लिए हिंदू अविभाजित परिवार में सहदायिक के नाम पर अधिग्रहण से संबंधित है। इसमें कोई विवाद नहीं है कि उक्त प्रावधान का तत्काल मामले में कोई अनुप्रयोग नहीं है और न ही प्रतिवादी-वादी के विद्वान वकील द्वारा उस पर कोई भरोसा किया गया था।

30. उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वकील श्री नवीन आर. नाथ द्वारा अधिनियम की धारा 4(3)(बी) का इस्तेमाल किया गया था, जो दो भागों में है। एक जो ट्रस्टियों और उसके लाभार्थियों से संबंधित है और दूसरा जो प्रत्ययी क्षमता में खड़े व्यक्तियों और जिनके प्रति वह ऐसी क्षमता में खड़ा है, से संबंधित है। श्री नाथ द्वारा यह तर्क दिया गया था कि

जिन परिस्थितियों में अपीलकर्ता के नाम पर खरीदारी की गई थी, वे यह निर्धारित करते समय बहुत महत्वपूर्ण हैं कि क्या अपीलकर्ता जिसके नाम पर संपत्ति अर्जित की गई थी, वह प्रतिवादी-वादी के प्रति प्रत्ययी क्षमता में था।

31. अभिव्यक्ति "विश्वासयोग्य क्षमता" को 1988 के अधिनियम या उस मामले के लिए किसी अन्य क़ानून में परिभाषित नहीं किया गया है। और फिर भी इसमें कोई दो राय नहीं है कि यह ज्ञात कानूनी महत्व की अभिव्यक्ति है, जिसके आयात की इस स्तर पर संक्षेप में जांच की जा सकती है।

32. शब्द "फिडुशियरी" *को कॉर्पस ज्यूरिस सेकुंडम* द्वारा इस प्रकार समझाया गया है:

> “शब्द की एक सामान्य परिभाषा जो सभी मामलों को शामिल करने के लिए पर्याप्त रूप से व्यापक है, अच्छी तरह से नहीं दी जा सकती है। यह शब्द सिविल या रोमन कानून से लिया गया है। यह विश्वास या विश्वास के विचार को दर्शाता है, लेन-देन के आधार के रूप में कानूनी दायित्व के बजाय अच्छे विश्वास पर विचार करता है, अपने क्रेडिट या क्षमता के बजाय भरोसेमंद पार्टी की ईमानदारी, निष्ठा को संदर्भित करता है, और इसे आयोजित किया गया है। उन सभी व्यक्तियों पर लागू होता है जो दूसरों के प्रति विशिष्ट विश्वास की स्थिति रखते हैं, और इसमें उन अनौपचारिक संबंधों को शामिल किया जाता है जो तब मौजूद होते हैं जब एक पक्ष दूसरे पर भरोसा करता है और भरोसा करता है, साथ ही तकनीकी प्रत्ययी संबंध भी।
>
> संज्ञा के रूप में 'विश्वासपात्र' शब्द का अर्थ है वह व्यक्ति जो किसी चीज़ को दूसरे के लिए विश्वास में रखता है, एक ट्रस्टी, एक ट्रस्टी के चरित्र को धारण करने वाला व्यक्ति, या इसमें शामिल विश्वास और विश्वास के संबंध में एक ट्रस्टी के समान चरित्र वाला व्यक्ति इसमें और ईमानदार सद्भावना और सद्भावना जिसकी इसे आवश्यकता है; किसी व्यक्ति का कर्तव्य, उसके उपक्रम द्वारा बनाया गया, ऐसे उपक्रम से जुड़े मामलों में मुख्य रूप से दूसरे के लाभ के लिए कार्य करना। इसके अलावा, अधिक विशेष रूप से, एक क़ानून में, एक अभिभावक, ट्रस्टी, निष्पादक, प्रशासक, रिसीवर, संरक्षक या किसी भी व्यक्ति, ट्रस्ट या संपत्ति के लिए किसी प्रत्ययी क्षमता में कार्य करने वाला कोई भी व्यक्ति।

33. *शब्द और वाक्यांश,* स्थायी संस्करण। (खंड 16-ए, पृष्ठ 41) "विश्वसनीय संबंध" को इस प्रकार परिभाषित करता है:

“एक 'विश्वसनीय संबंध' के बीच एक तकनीकी अंतर है जो पार्टियों के बीच कानूनी संबंधों पर अधिक सही ढंग से लागू होता है, जैसे कि अभिभावक और वार्ड, प्रशासक और उत्तराधिकारी, और अन्य समान रिश्ते, और 'गोपनीय संबंध' जिसमें कानूनी रिश्ते शामिल हैं, और साथ ही हर दूसरे रिश्ते में, जिसमें सही तरीके से विश्वास जताया जाता है और उसका प्रयोग किया जाता है।

आम तौर पर, 'विश्वासपात्र' शब्द किसी भी ऐसे व्यक्ति पर लागू होता है जो दूसरे के प्रति विशिष्ट आत्मविश्वास की स्थिति रखता है। यह अखंडता और निष्ठा को संदर्भित करता है। यह लेन-देन के आधार के रूप में कानूनी दायित्व के बजाय निष्पक्ष व्यवहार और अच्छे विश्वास पर विचार करता है। इस शब्द में वे अनौपचारिक संबंध शामिल हैं जो तब अस्तित्व में आते हैं जब एक पक्ष दूसरे पर भरोसा करता है और उस पर भरोसा करता है, साथ ही तकनीकी प्रत्ययी संबंध भी शामिल हैं।

34. *ब्लैक लॉ डिक्शनरी* (7वां संस्करण, पृष्ठ 640) "विश्वासपूर्ण संबंध" को इस प्रकार परिभाषित करता है:

"विश्वासपूर्ण संबंध। - एक ऐसा रिश्ता जिसमें एक व्यक्ति रिश्ते के दायरे में आने वाले मामलों पर दूसरे के लाभ के लिए कार्य करने के कर्तव्य के तहत होता है। ट्रस्टी-लाभार्थी, अभिभावक-वार्ड, एजेंट-प्रिंसिपल और वकील-ग्राहक जैसे प्रत्ययी रिश्तों को देखभाल के उच्चतम कर्तव्य की आवश्यकता होती है। प्रत्ययी रिश्ते आमतौर पर चार स्थितियों में से एक में उत्पन्न होते हैं: (1) जब एक व्यक्ति दूसरे की वफादार अखंडता पर भरोसा करता है, जिसके परिणामस्वरूप पहले व्यक्ति पर श्रेष्ठता या प्रभाव प्राप्त होता है, (2) जब एक व्यक्ति दूसरे पर नियंत्रण और जिम्मेदारी लेता है, (3) जब एक व्यक्ति का कर्तव्य होता है कि वह रिश्ते के दायरे में आने वाले मामलों पर दूसरे के लिए काम करे या उसे सलाह दे, या (4) जब कोई विशिष्ट रिश्ता हो जिसे परंपरागत रूप से प्रत्ययी कर्तव्यों को शामिल करने के रूप में मान्यता दी गई हो, जैसे कि वकील और एक ग्राहक या एक स्टॉकब्रोकर और एक ग्राहक।"

35. *स्ट्राउड का न्यायिक शब्दकोश* "विश्वासीय क्षमता" अभिव्यक्ति की व्याख्या इस प्रकार करता है:

" प्रत्ययी क्षमता - एक प्रशासक जिसने प्रशासन के पत्रों के तहत धन प्राप्त किया था और जिसे अनुदान को वापस लेने के लिए एक मुकदमे में भुगतान करने का आदेश दिया गया है, वह इसे देनदार अधिनियम, 1869 के तहत 'विश्वासीय क्षमता में' रखता है। , एक निष्पादक से देय ऋण का, जो अपने वसीयतकर्ता की संपत्ति का ऋणी है, जिसे वह भुगतान करने में सक्षम है, लेकिन नहीं करेगा, रिसीवर, या एजेंट, या प्रबंधक के हाथों में धन, या लंदन से किसी खाते पर देय धन का। किसी देश के वकील का एजेंट, या नीलामीकर्ता के हाथों बिक्री की आय, या धन जो किसी कार्रवाई के समझौते में किसी भागीदार द्वारा प्राप्त कुछ ट्रस्टों या साझेदारी धन पर रखने का आदेश दिया गया है।

36. *बाउवियर्स लॉ डिक्शनरी* "विश्वासीय क्षमता" को निम्नानुसार परिभाषित करती है:

"विश्वासपूर्ण संबंध का गठन अक्सर विवाद का विषय होता है। यह उन सभी व्यक्तियों पर लागू होता है जो दूसरों के प्रति विशिष्ट विश्वास की स्थिति रखते हैं, जैसे कि ट्रस्टी, निष्पादक, या प्रशासक, निगम या समाज के निदेशक, चिकित्सा या धार्मिक सलाहकार, पति और पत्नी, एक एजेंट जो धन का विनियोजन करता है। निवेश के एक विशिष्ट उद्देश्य के लिए उसके हाथों में सौंपा गया, शहर के करों का संग्रहकर्ता जो आधिकारिक तौर पर एकत्र किए गए धन को अपने पास रखता है, जो संग्रह के लिए एक नोट या अन्य सुरक्षा प्राप्त करता है। निम्नलिखित मामलों में ऋण को प्रत्ययी नहीं माना गया है: एक कारक जो अपने मूलधन के पैसे को बरकरार रखता है, एक एजेंट जो मासिक हिसाब-किताब करने और भुगतान करने के समझौते के तहत होता है, एक जिसके साथ पैसे की सामान्य जमा राशि बनाई जाती है।

37. इस स्तर पर हम सीबीएसई बनाम *आदित्य बंदोपाध्याय3* में इस न्यायालय के हालिया फैसले का उल्लेख कर सकते हैं, जिसमें रवींद्रन, जे. ने उस मामले में न्यायालय के लिए बोलते हुए निम्नलिखित शब्दों में "विश्वासपूर्ण" और "विश्वासीय संबंध" शब्दों को समझाया: (एससीसी पृ. 524-25, पैरा 39)

> “39. 'विश्वासपात्र' शब्द एक ऐसे व्यक्ति को संदर्भित करता है जिसका कर्तव्य दूसरे के लाभ के लिए कार्य करना, अच्छा विश्वास और स्पष्टवादिता दिखाना है, जहां ऐसा अन्य व्यक्ति कर्तव्य निभाने वाले या उसका निर्वहन करने वाले व्यक्ति पर भरोसा और विशेष विश्वास रखता है। 'न्यासी संबंध' शब्द का प्रयोग ऐसी स्थिति या लेनदेन का वर्णन करने के लिए किया जाता है जहां एक व्यक्ति (लाभार्थी) अपने मामलों, व्यवसाय या लेनदेन के संबंध में दूसरे व्यक्ति (न्यासी) पर पूरा भरोसा रखता है। यह शब्द उस व्यक्ति को भी संदर्भित करता है जो किसी चीज़ को दूसरे (लाभार्थी) के भरोसे रखता है। प्रत्ययी से अपेक्षा की जाती है कि वह विश्वास में और लाभार्थी के लाभ और लाभ के लिए कार्य करेगा, और लाभार्थी या लाभार्थी से संबंधित चीजों से निपटने में सद्भावना और निष्पक्षता का उपयोग करेगा। यदि लाभार्थी ने प्रत्ययी को कोई चीज़ सौंपी है, उस चीज़ को विश्वास में रखने के लिए या सौंपी गई वस्तु के संबंध में या उसके संबंध में कुछ कार्य निष्पादित करने के लिए, तो प्रत्ययी को विश्वास में कार्य करना होगा और उससे अपेक्षा की जाती है कि वह उस चीज़ या जानकारी का खुलासा न करे। कोई तीसरा पक्ष।"

यह स्पष्ट है कि हालांकि अभिव्यक्ति "विश्वासपूर्ण क्षमता" एक सटीक परिभाषा में सक्षम नहीं हो सकती है, लेकिन इसका तात्पर्य एक ऐसे रिश्ते से है जो ट्रस्टी और ट्रस्ट के लाभार्थियों के बीच के रिश्ते के अनुरूप है। यह अभिव्यक्ति वास्तव में अपने अर्थ में व्यापक है क्योंकि यह ऐसी सभी स्थितियों तक फैली हुई है, जहां पार्टियों को ऐसे पदों पर रखा जाता है जो एक तरफ आत्मविश्वास और भरोसे पर और दूसरे पर अच्छे विश्वास पर आधारित होते हैं।

38. यह निर्धारित करने में कि क्या कोई रिश्ता विश्वास या भरोसे पर आधारित है, यह निर्धारित करने के लिए प्रासंगिक है कि क्या वे प्रत्ययी क्षमता में खड़े हैं, अदालत को उस तथ्यात्मक संदर्भ को ध्यान में रखना होगा जिसमें प्रश्न उठता है क्योंकि यह केवल तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में है किसी दिए गए मामले में प्रत्ययी रिश्ते के अस्तित्व या अन्यथा का अनुमान लगाया जा सकता है। ऐसा कहने के बाद, आइए हम यह निर्धारित करने के लिए एक बार फिर वर्तमान मामले के तथ्यों की ओर मुड़ें कि क्या अपीलकर्ता प्रतिवादी-वादी के मुकाबले प्रत्ययी क्षमता में था।

11. इसके बाद मामले के तथ्यात्मक पहलुओं पर विचार किया गया और पैरा 42 और 43 में यह देखा गया: -

> "42. ... ...यह निष्कर्ष इस तथ्य से मजबूत हो जाता है कि पार्टियों ने मुकदमे की संपत्ति के अधिग्रहण के लिए भुगतान की गई बिक्री पर विचार के लिए योगदान दिया था, जो कि अगर अपीलकर्ता के पक्ष में संपत्ति को स्वीकार करने का इरादा होता तो वे ऐसा नहीं करते।
>
> 43. ... ... मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अपीलकर्ता पर भरोसा और विश्वास रखना असामान्य या अप्राकृतिक नहीं था, खासकर तब जब मुकदमे की संपत्ति पर वादी का कब्जा जारी रहा, जिसे कानून और तर्क की समानता पर माना जाएगा। अपीलकर्ता के लाभ के लिए उतना ही उतना ही धारण करना जितना अपीलकर्ता वादी के लाभ के लिए संपत्ति का स्वामित्व धारण कर रहा था।"

12. इस प्रकार, यह निष्कर्ष निकाला गया कि उप-धारा (3)(बी) के अंतर्गत आने के कारण लेनदेन को अधिनियम की धारा 4 की शरारत से पूरी तरह से बचाया गया था और मुकदमा अधिनियम के तहत वर्जित नहीं था। विद्वान अधिवक्ता श्री अभिषेक गुप्ता ने इस फैसले पर सही भरोसा किया। दूसरी ओर, श्री आर.के. द्वारा रखी गई निर्भरता। हमारी राय में, ***ओम प्रकाश2*** में सिंह का निर्णय पूरी तरह गलत है। वहां मुद्दा यह था कि क्या धारा 4 के तहत निषेधाज्ञा अध्यादेश के लागू होने से पहले शुरू की गई कार्रवाइयों के संबंध में लागू होगी या नहीं? मामले की किसी भी स्थिति में, यह मुद्दा कि क्या अधिनियम के प्रावधान पूर्वव्यापी हैं, पहले ही सुलझा लिया गया है4।

13. वर्तमान मामले में, आदेश VII नियम 11 सीपीसी के तहत एक आवेदन में विवाद उत्पन्न हुआ है। क्या मामला अधिनियम की धारा 4(3) के दायरे में आता है या नहीं, यह एक ऐसा पहलू है जिस पर रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर गौर किया जाना चाहिए। वादपत्र में दिए गए कथनों के अनुसार, यह प्रश्न कि क्या अपीलकर्ता द्वारा उठाई गई याचिका अधिनियम की धारा 4 के तहत वर्जित है या नहीं, उस स्तर पर मूल्यांकन का विषय नहीं हो सकता था जब आदेश VII नियम 11 सीपीसी के तहत आवेदन लिया गया था। कीमत के एवज में। पक्षों द्वारा साक्ष्य दिए जाने के बाद मामले पर पूर्ण और अंतिम विचार की आवश्यकता थी। यह नहीं कहा जा सकता कि अपीलकर्ता की दलील, जैसा कि प्रथम दृष्टया उठाया गया था, अधिनियम के तहत वर्जित थी। दृष्टिकोण यह होना चाहिए

कि विलंब पर आगे बढ़ें और देखें कि क्या वादपत्र में दिए गए कथनों को स्वीकार करना किसी कानून द्वारा वर्जित है या नहीं। हम पोपट और कोटेचा प्रॉपर्टी बनाम स्टेट बैंक ऑफ इंडिया स्टाफ एसोसिएशन5 में इस न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों को उद्धृत कर सकते हैं:

> "10. आदेश 7 नियम 7 का खंड (डी) मुकदमे की बात करता है, जैसा कि वादपत्र में दिए गए बयान से प्रतीत होता है कि यह किसी भी कानून द्वारा वर्जित है। आदेश 7 नियम 11 सीपीसी के तहत दायर आवेदन पर विचार करते समय विवादित प्रश्नों पर निर्णय नहीं लिया जा सकता है। आदेश 7 के नियम 11 का खंड (डी) केवल उन मामलों में लागू होता है जहां वादी द्वारा बिना किसी संदेह या विवाद के दिए गए बयान से पता चलता है कि मुकदमा लागू किसी भी कानून द्वारा वर्जित है।

14. इसलिए, हम इस अपील को स्वीकार करते हैं, नीचे की अदालतों द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को रद्द करते हैं और आदेश VII नियम 11 सीपीसी के तहत दूसरे प्रतिवादी द्वारा दिए गए आवेदन को खारिज करते हैं। चूंकि मुकदमा 2006 से लंबित है, इसलिए हम ट्रायल कोर्ट को मामले में तेजी लाने और लंबित मुकदमे को जल्द से जल्द और अधिमानतः आज से छह महीने के भीतर निपटाने का निर्देश देते हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि ट्रायल कोर्ट द्वारा मामले की खूबियों पर स्वतंत्र रूप से विचार किया जाएगा।

15. उपरोक्त शर्तों के तहत अपील स्वीकार की जाती है। कोई लागत नहीं.

कल्पना के. त्रिपाठी अपील स्वीकार की गई।

आशीष तिवारी की देखरेख में मानसी मिश्रा द्वारा अनुवादित।